विपश्यना पत्रिका संग्रह

वर्ष १० से वर्ष १२ (जुलाई १९८० से जून १९८३ तक)

भाग-४

विपश्यनाचार्य श्री सत्यनारायण गोयन्का

विपश्यना

पत्रिका संग्रह

भाग - ४

वर्ष १० से वर्ष १२

(जुलाई १९८० से जून १९८३ तक)

विपश्यनाचार्य श्री सत्यनारायण गोयन्का के लेख
तथा पत्रिका में प्रकाशित अन्य लेखों का संग्रह

विपश्यना विशोधन विन्यास
धम्मगिरि, इगतपुरी

विषयानुक्रमणिका

विपश्यना पत्रिका संग्रह भाग - ४

(जुलाई १९८० से जून १९८१ तक)

सुखी गृहस्थ (घ) ३
क्या है श्रद्धा-संपत्ति ? ४
क्या है शील-संपत्ति ? ५
क्या है त्याग-संपत्ति ? ५
क्या है प्रज्ञा-संपत्ति ? ५
गृही आचार-संहिता (क) ९
गृही आचार-संहिता (ख) १२
गृही आचार-संहिता (ग) १५
१. माता-पिता की सेवा १५
२. गुरुजनों की सेवा १६
३. पत्नी की सेवा १६
४. मित्र की सेवा १७
५. नौकर की सेवा १८
६. श्रमण-ब्राह्मण की सेवा १८
विपश्यना की विश्व-यात्रा-२ (क) २०
विपश्यना की विश्व-यात्रा-२ (ख) २६
मृत्युंजयी ३०
कृतज्ञ हूं! ३२
व्यसन-विमुक्ति ३३
स्थूल से सूक्ष्मता की ओर ३८
विपश्यना साधना - मेरा अनुभव
(– डॉ. कृष्ण मुरारी मोदी, एम. बी. बी. एस) ४३
धन्य हैं, धर्म सेवक! ४८
बुद्ध जयंती ५५
साधुवाद! ५७

(जुलाई १९८१ से जून १९८२ तक)

दु:ख का कारण: कमी नहीं, कामना *(– श्री कन्हैयालाल लोढ़ा)* ६१

समाधि-कथा ६७
तृष्णा की गुलामी और मुक्ति ७३
लोक-चक्र और धर्म-चक्र ७७
ब्राह्मण सुनीत ८१
संत सुनीत के उदान ८३
बालक सोपाक ८४
प्रवचन-प्रवाह (पहला दिन) ८७
प्रवचन-प्रवाह (दूसरा दिन) ९२
प्रवचन-प्रवाह (तीसरा दिन) ९७
प्रवचन-प्रवाह (चौथा दिन) १०३
प्रवचन-प्रवाह (पांचवा दिन) १०९
धर्म-ज्योति ११५

(जुलाई १९८२ से जून १९८३ तक)

प्रवचन-प्रवाह (छठा दिन) ११९
प्रवचन-प्रवाह (सातवां दिन) १२५
प्रवचन-प्रवाह (आठवां दिन) १३१
प्रवचन-प्रवाह (नवां दिन) १३८
प्रवचन-प्रवाह (दसवां दिन) १४५
प्रवचन-प्रवाह (दीक्षांत-प्रवचन) १५१
निर्मल धर्म १५७
वास्तविक दुःख-विमुक्ति का उपायः विपश्यना *(– कन्हैयालाल लोढ़ा)* ...१६२
प्रज्ञा-कथा १६६
दुःख-विमुक्ति १७०
मेरा पहला शिविर *(– करुणा, जयपुर)* १७३
प्राकृतिक चिकित्सा और विपश्यनाः १७५
समन्वय और अनुसंधान *(– डॉ. विट्ठलदास मोदी)* १७५
संबोधि-दिवस १७९
एक ही मार्ग *(– राजेंद्र सिंह)* १८१
संवेदना (१) १८३
एक पत्र *(– धर्मपुत्र, रोजर, कनाडा)* **.....१८४**

सुखी गृहस्थ (घ)

किसी भी सामान्य सद्गृहस्थ की यह चार स्वाभाविक अभिलाषाएं होती हैं।

१. वह चाहता है कि विपन्न न रहे। विपन्नता, गरीबी, भुखमरी, कंगाली गृहस्थ के लिए, गृही समाज के लिए अभिशाप है। भुखमरी में धर्म का पालन तो दूर उसका चिंतन भी कठिन हो जाता है। अतः गृहस्थ के लिए समृद्धिसंपन्नता की अभिलाषा स्वाभाविक है। समझदार गृहस्थ होता है तो यह भी समझता है कि धन-संपदा उसके अपने श्रम से अर्जित हो, धर्मपूर्वक अर्जित हो। बिना परिश्रम किए जो धन आता है वह उपयोगी नहीं होता, संतोषकारक नहीं होता; उसका अपव्यय ही होता है। इसी प्रकार अधर्मपूर्वक धन आता है तो वह भी सुख-शांति का कारण नहीं बनता। परायी संपत्ति दबोच कर, चुरा कर, लूट कर, छीन कर, छल-छद्म द्वारा अपनी बना ले तो उससे अशांति ही उत्पन्न होती है। ऐसी संपदा का सदुपयोग नहीं होता, दुरुपयोग ही होता है। अतः समझदार सद्गृहस्थ की अभिलाषा यही होती है कि वह श्रमपूर्वक, धर्मपूर्वक, न्याय-नीतिपूर्वक समृद्धि-संपदा अर्जित करे। यह पहली अभिलाषा है जिसकी पूर्ति किसी भी सद्गृहस्थ के लिए प्रिय होती है, मनोरम होती है, सुखद होती है, पर दुर्लभ होती है।

२. श्रमपूर्वक, धर्मपूर्वक संपदा अर्जित कर ले तो सद्गृहस्थ की दूसरी अभिलाषा होती है कि वह समाज में, गुरुजनों में यश प्राप्त करे। भुखमरी की अवस्था में एक व्यक्ति धर्म-नीति को तिलांजलि देकर दुष्कर्म करने पर उतारू हो सकता है। पर जब भुखमरी नहीं हो तो सद्गृहस्थ की अभिलाषा होती है कि उसके द्वारा शरीर या वाणी से, छोटा या बड़ा, कोई भी ऐसा काम न हो जाय जो उसके अपयश का कारण बने। बिना दुष्कर्म किए यदि झूठी निंदा होती है तो समझदार सद्गृहस्थ उससे विचलित नहीं होता, परंतु दुष्कर्म करने पर जो निंदा होती है उससे वह लज्जित होता है, उत्तापित होता है। अतः स्वभावतः समझदार सद्गृहस्थ की यह अभिलाषा होती है कि वह धर्मपूर्वक यश का जीवन जीए। यह दूसरी अभिलाषा है जिसकी पूर्ति किसी भी सद्गृहस्थ के लिए मनोरम होती है, प्रिय होती है, सुखद होती है; पर दुर्लभ होती है।

३. धर्मपूर्वक, श्रमपूर्वक संपदा प्राप्त करके और शुभ कर्मों द्वारा यश प्राप्त करके एक सद्गृहस्थ की यह तीसरी अभिलाषा होती है कि वह चिरकाल तक स्वस्थ जीवन जीए। सद्गृहस्थ बखूबी समझता है कि मनुष्य-जीवन बड़ा अनमोल है। इसी जीवन में अंतर्मुखी होकर सत्य-दर्शन करते-करते, आत्म-दर्शन करते-करते परमसत्य का साक्षात्कार किया जा सकता है। जीवन-मुक्त हुआ जा सकता है।

कृतज्ञ हूं!

परम आदरणीय गुरुदेव!

आपको शरीर छोड़े १० वर्ष पूरे हुए। लेकिन आपका मंगलमय सान्निध्य अब भी महसूस होते रहता है। धर्म का सान्निध्य है तो आपका सान्निध्य है ही। धर्म का सान्निध्य बना रहे ताकि आपका मंगलमय सान्निध्य बना रहे। यही शिव-संकल्प है।

कितना मंगलमय है आपका सान्निध्य! धर्म का सान्निध्य! जब-जब धर्म-सान्निध्य होता है तब-तब आपकी असीम करुणा का स्मरण हो आता है और मन कृतज्ञता व रोमांच-पुलक से भर उठता है।

मन कृतज्ञता से भर उठता है उन भगवान सम्यकसंबुद्ध शाक्यमुनि गौतम के प्रति जिन्होंने असंख्य जन्मों तक साधनामय जीवन जीते हुए दसों पुण्य-पारमिताओं को परिपूर्ण किया जिससे कि न केवल अपनी स्वस्ति-मुक्ति साध सके, बल्कि अनेकों की स्वस्ति-मुक्ति का कारण बने। ऐसी कल्याणकारी विद्या खोज निकाली जिसे जीवन भर करुणचित्त से मुक्तहस्त बांटते रहे, जिससे अगणित लोगों का मंगल सधा।

और कृतज्ञता से मन भर उठता है उन जीवनमुक्त अर्हंतों के प्रति जिन्होंने यह कल्याणकारी विद्या भगवान से प्राप्त कर **"चरथ, भिक्खवे, चारिकं बहुजन हिताय बहुजन सुखाय लोकानुकम्पाय"** के मंगल आदेश को शिरोधार्य कर गांव-गांव, नगर-नगर, जनपद-जनपद में इस मुक्तिदायिनी विद्या को बांटने में अपना जीवन लगा दिया।

और कृतज्ञता से मन भर उठता है उन सभी सत्पुरुषों के प्रति जिन्होंने कि इस पावन धर्म-गंगा को अनेक पीढ़ियों तक प्रवहमान रखा।

कृतज्ञता से मन भर उठता है उन अर्हत सोण और उत्तर के प्रति जो विदेश-यात्रा के सभी संकटों को झेलते हुए भागीरथ की तरह इस धर्मगंगा को स्वर्णभूमि ले गए और अगणित प्यासों की प्यास बुझायी।

और कृतज्ञता से मन भर उठता है उन परंपरागत धर्म-आचार्यों के प्रति जिन्होंने ब्रह्मदेश में गुरु-शिष्य परंपरा द्वारा इस विद्या को पीढ़ी-दर-पीढ़ी अपने शुद्ध रूप में कायम रखा। इसमें शब्दों का, रंग-रूप का, आकृति, कल्पनाओं आदि का सम्मिश्रण नहीं होने दिया। जो पथ स्थूल भासमान सत्य का भेदन करता हुआ सूक्ष्मतम परम सत्य की ओर ले जाने वाला राजपथ है, उसे एक स्थूल भासमान

विपश्यना साधना - मेरा अनुभव

– डॉ. कृष्ण मुरारी मोदी,
एम.बी.बी.एस.

मेरे पिता श्री विट्ठलदास जी मोदी गोरखपुर में रहते हैं और मैं मुंबई में। जब भी उनसे मिलने मैं गोरखपुर जाता, वे मुझे दस दिन के विपश्यना साधना के एक शिविर में सम्मिलित होने को उत्साहित करते। वे ऐसे शिविर में पिछले चार वर्षों से प्रतिवर्ष जाते हैं। मिलने पर वे कहते कि विपश्यना साधना से शरीर का शोधन प्राकृतिक चिकित्सा से भी अच्छा और जल्दी होता है। मैं उनका सात वर्ष तक आरोग्य मंदिर में सहकारी चिकित्सक रहा हूं और प्राकृतिक चिकित्सा की शक्ति समझता हूं। अतः मुझे उनकी बातों पर विश्वास न होता। १७ फरवरी १९८० को मैं उन्हें मुंबई ले जाने के लिए उनके शिविर के अंतिम दिन इगतपुरी पहुँचा तो एक बार फिर उन्होंने मुझे इस साधना का अनुभव लेने को उकसाया। और मैंने उनकी आज्ञा के पालन हेतु २९ फरवरी से शुरू होने वाले दस दिन के शिविर में सम्मिलित होने के लिए अपना नाम लिखवा ही दिया।

सुना है पुराने जमाने में ऋषि-मुनि शांति की खोज में जंगल और पहाड़ों पर जाकर तपस्या किया करते थे। वे ऐसी जगह इसलिए जाते थे कि अंदर शांति ढूँढ़ने के लिए बाहर भी शांति तो होनी ही चाहिए। इगतपुरी का धम्मगिरि भी एक ऐसा ही सुंदर, सुरम्य, शांत स्थान है। पहाड़ी की चोटी पर स्थित, शहर के कोलाहल से दूर, पहाड़ियों से घिरी हुई, वृक्षों और फूलों से लदी हुई प्रकृति की गोद में बना यह आश्रम और उसका शांत, पवित्र वातावरण देखकर तबीयत खुश हो गई। एक नवनिर्मित उच्च शिखरीय पगोडा और उसके साथ जुड़ा हुआ एक बड़ा हॉल, जहां एक साथ ३०० साधक बैठकर साधना कर सकते हैं; बड़ा भव्य लगा। पगोडा के अंदर वृत्ताकार चालीस छोटी-छोटी कोठरियां (शून्यागार) हैं, जहां अकेला साधक बैठकर ध्यान कर सकता है। रहने के लिए यहाँ कई बड़े-बड़े हॉल हैं जहां कतार से चारपाइयां लगी हैं। पहाड़ी के ढलान पर बनी घास की छप्परवाली पचास झोपड़ियां भी हैं। आपको पसंद हो तो झोपड़ी में रहिए, न पसंद हो तो डारमेटरी में। कुछ पक्के आवास-कुटीर भी हैं और भविष्य की बड़ी योजनाएं हैं।

मुझे लगा कि अपने नाम – "विपश्यना इंटरनेशनल एकेडेमी" के अनुरूप ही यह स्थान है। २५० विद्यार्थी आए थे, जिनमें १०० विदेशी थे। विद्यार्थी हर उम्र के थे – बूढ़े, जवान, स्त्रियां, लड़कियां। इन अनुशासन प्रिय विद्यार्थियों के चेहरों

धन्य हैं, धर्म सेवक!

धन्य हैं धर्मसेवक जो नितांत निःस्वार्थभाव से धर्म-शिविरों के आयोजन और व्यवस्था का भार हँसते-हँसते वहन करते हैं। धर्म-शिविर की सफलता में धर्मशिक्षक का जितना बड़ा दायित्व और श्रम होता है, इन धर्मसेवकों का उससे कम नहीं होता। सामान्य साधक इस बात से अनभिज्ञ ही रहता है कि शिविर की सफलता में एक धर्मसेवक कितना बड़ा सहयोग दे रहा है!

शिविर की तारीखें निश्चित होते ही धर्मसेवकों का सेवाकार्य आरंभ हो जाता है। उसकी सूचना विपश्यना पत्रिका में प्रकाशित की जानी आवश्यक है। विपश्यना का अंक समय पर प्रकाशित करने के लिए मैटर प्रेस में भेजना, उसका प्रूफ पढ़ना और छपने पर सभी पुराने साधकों के पते पर पोस्ट करना – सारा काम धर्मसेवक ही करते हैं। पत्रिका के अतिरिक्त हिंदी और अंग्रेजी में शिविर-सूचना के पत्रक छपाए जाते हैं जो किसी शिविरार्थी द्वारा पूछ-ताछ किए जाने पर उसे भेजे जाते हैं। जब कोई व्यक्ति शिविर में सम्मिलित होने की रुचि प्रकट करता है तो आवेदन-पत्र सहित शिविर के अनुशासन की नियमावली भेजी जाती है। किसी के विशेष प्रश्न होते हैं तो धर्मशिक्षक से पूछकर अन्यथा सामान्य प्रश्नों के उत्तर धर्मसेवक द्वारा ही दिए जाते हैं। यों बुकिंग का काम आरंभ हो जाता है। एक साथ अनेक शिविरों की सूचना प्रकाशित होती है अतः सबसे समीपवर्ती शिविर की अधिक, परंतु आगे के अनेक शिविरों की बुकिंग के भी आवेदन-पत्र आने ही लगते हैं। जिन्हें जिस-जिस शिविर में स्वीकृति दी जाती है, उस-उस शिविर की तालिका में उनका नाम, पता तथा प्राप्त विवरण दर्ज किए जाते हैं।

धर्मसेवक को यहीं से शिविरार्थी का सहयोग आवश्यक हो जाता है। जो शिविरार्थी समझदार और जिम्मेदार होते हैं वे प्रवेश-पत्र में पूछे गए सभी प्रश्नों का ठीक-ठीक और पूरा उत्तर देते हैं। परंतु कुछ एक लापरवाह होते हैं और इन प्रश्नों का महत्त्व नहीं समझते। वे उत्तर अधूरा देते हैं अथवा नहीं ही देते और इस कारण धर्मसेवक के लिए ही नहीं बल्कि अपने लिए भी कठिनाई पैदा कर लेते हैं। आवेदन-पत्र के सारे प्रश्न सार्थक होते हैं, निरर्थक एक भी नहीं। इन्हीं सूचनाओं के आधार पर धर्मसेवक शिविर आरंभ होने के एक सप्ताह पूर्व से ही व्यवस्था का काम शुरू कर देते हैं। शिविरार्थी नया है या पुराना? पुराना है तो कितना पुराना? देशी है या विदेशी? हिन्दी समझता है या नहीं? पुरुष है या

बुद्ध जयंती

वैशाख पूर्णिमा! भगवान गौतम बुद्ध की त्रिविध जयंती का पावन दिवस! जन्म जयंती, बोधि जयंती, परिनिर्वाण जयंती! जयंती माने विजय! विजय वस्तुतः बोधि की ही है। बोधि जयंती में ही जन्म जयंती और परिनिर्वाण जयंती का मूल समाया हुआ है।

सम्यकसंबोधि जागी तो ही मार पर विजय प्राप्त हुई। पाप पर, अधर्म पर, समस्त बंधनों पर विजय प्राप्त हुई। ऐसी विजय जिसने जन्म और मृत्यु की जयंतियों को सफल सार्थक बना दिया। सम्यक-संबोधि के कारण ही जन्म अंतिम जन्म बन गया, मृत्यु अंतिम मृत्यु बन गयी। **"अयं अन्तिमा जाति नत्थिदानि पुनब्भवोति"** यह अंतिम जन्म है। अब पुनर्जन्म नहीं होगा। पुनर्जन्म नहीं होगा तो पुनर्मृत्यु भी नहीं होगी। जन्म और मृत्यु दोनों पर सहज ही विजय प्राप्त हो गयी।

इस महापुरुष की यह महान विजय अन्य अनेकों की विजय का कारण बन गयी। अनेकों के मंगल-कल्याण और स्वस्ति-मुक्ति का साधन बन गयी। अनेक कष्टों से गुजरते हुए इस महा मानव ने भारत की खोई हुई मुक्तिदायिनी धर्मगंगा पुनः खोज निकाली। उससे केवल अपनी ही मुक्ति नहीं साधी, बल्कि अनेकों के लिए मुक्ति सुलभ कर दी। अत्यंत करुणा विगलित हृदय से जीवनभर जन-जन को यह विद्या बांटते रहे। जन-जन के लिए अमृत का द्वार खोलते रहे। इस प्रकार लगभग २५०० वर्ष पूर्व जो धर्मगंगा फूट पड़ी वह पीढ़ी-दर-पीढ़ी कोटि-कोटि लोगों का कल्याण करती हुई कहीं न कहीं परम परिशुद्धरूप में प्रवहमान बनी ही रही। समय पाकर कहीं विलुप्त भी हुई, कहीं नासमझ लोगों द्वारा सम्मिश्रण के दोष से दूषित होकर विकृत भी हुई। परंतु एक क्षीण धारा इतनी सदियों तक भी अपने शुद्ध रूप में कायम रही। कायम रही तो ही हमें प्राप्त हुई। हमारे कल्याण-मंगल का, स्वस्ति-मुक्ति का कारण बनी!

विपश्यी साधक इस शुद्ध धर्मगंगा में अवगाहन कर धन्य हो उठता है तो स्वभावतः उस महापुरुष के प्रति असीम श्रद्धा और कृतज्ञता के भाव से भर उठता है। श्रद्धा और कृतज्ञता धर्म के अविभाज्य अंग हैं। श्रद्धा बोधि का अंग है। श्रद्धा बीज है जिसकी वजह से ही बोधि जागती है, धर्म फल देता है। कृतज्ञता प्राणदायिनी संजीवनी है जिसके कारण धर्म बलशाली होता है। श्रद्धा और कृतज्ञता न हो तो धर्म का बिरवा मुरझा जाय। श्रद्धा और कृतज्ञता का पनपना धर्म का ही पनपना है। पर समझदार साधक सजग रहता है, अपना विवेक नहीं खोता। श्रद्धा को अंधश्रद्धा नहीं बनने देता। कृतज्ञता को अंधकृतज्ञता नहीं बनने